Chapter 6

-- षष्ठ अध्याय

--:: साठोत्तरी लम्बी कविताएँ ::--

साठोत्तरी कवियों के काव्य-शिल्प की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उन्होंने काव्य-वस्तु को सम्प्रेषित करने के लिए कभी बिल्कुल मिनी कविताएँ लिखीं तो कभी पुराने खण्ड-काव्यों की याद दिलाने वाली लम्बी कविताएँ लिखीं। 'अगली कविता' आन्दोलन 'लघु बौद्धिक कविता' का हिमायती था, इसलिए वहाँ विचारपूर्ण उक्तियाँ ही कविता के रूप में मिलती हैं। निस्सदेह कुछ कवियों ने बहुत थोड़े से शब्दों में मिनी कविताओं के माध्यम से जीवन सत्य को बड़ी खूबी के साथ कहा है।[1] सुरेन्द्र तिवारी, कैलाश बाजपेयी, नीलाभ आदि कवियों ने छोटी कविताएँ लिखी हैं। श्रीकान्त वर्मा ने एक पंक्ति की कविता[2] लिखकर शिल्प में नया प्रयोग किया है परन्तु बहुत छोटी या मिनी कविताओं के शिल्प से ज्यादा लोकप्रिय शिल्प लम्बी कविताओं का है। लम्बी कविताओं की ओर रुझान के मूल में मुक्तिबोध के उस 'अँधेरे में' कविता की सफलता और चर्चा है।

- -

(१) क- वेश्या
सैक्यूलर स्टेट

ख- चौराहा पार करता आदमी
चूहे दानी से बचा हुआ चूहा

---राष्ट्रवाणी अगस्त, १९७१ - पृष्ठ- ३

ग- जिन्दगी अब दर्द से आगे
बढ़ गयी है
मिट्टी की गुड़िया
छत पर चढ़ गयी है

---संक्रान्त - स्थिति - कैलाशवाजपेयी पृष्ठ- ८६

(२) 'गायें वध स्थल की ओर'
--माया दर्पण - मौर - श्रीकान्त वर्मा - पृष्ठ- ८६

मुक्तिबोध के ही अनुकरण पर फैंटेसी का उपयोग करते हुए समकालीन वास्तव (विशेषत: राजनीतिक पक्ष) की अभिव्यक्ति और समीक्षा करने वाली मुक्ति प्रसंग, पटकथा, लुकमान अली, खण्ड खण्ड पाखण्ड पर्व और तलघर आदि कविताएँ लिखीं गई हैं। इनमें प्रथम दो ही अधिक महत्व की हैं।

मुक्तिबोध ने एक साहित्यिक की डायरी में 'एक लम्बी कविता का अन्त' के अन्तर्गत लिखा है 'यथार्थ के तत्व परस्पर गुंफित होते हैं, साथ ही पूरा यथार्थ गतिशील होता है। अभिव्यक्ति का विषय बनकर जो यथार्थ प्रस्तुत होता है वह भी ऐसा ही गतिशील है और उसके तत्व भी परस्पर गुंफित हैं यही कारण है कि मैं छोटी कविताएँ लिख नहीं पाता और जो छोटी होती हैं वे छोटी न होकर अधूरी होती हैं।'[१] यानी कि मुक्तिबोध के विचार में छोटी कविताएँ यथार्थ को पूरी तरह से पकड़ नहीं पाती इसलिए वे लम्बी कविताओं के लिए बाध्य हुए। कुछ समीक्षकों का विचार है कि मुक्तिबोध को लम्बी कविताओं की राह से इसलिए गुजरना पड़ा कि वे वास्तव की जटिलता और जटिल की वास्तविकता को अच्छी तरह पकड़ सकें।[२] डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव मुक्तिबोध की कविताओं के लम्बेपन के पीछे उनके जटिल और व्यापक आत्मसंघर्ष को पाते हैं जिसके जरिये वे अपने को पहचानने के साथ अपने को दूसरों तक पहुँचाते भी हैं।[३] मुक्तिबोध की लम्बी कविताओं से सम्बद्ध उपर्युक्त विवेचन से कम से कम यह बात तो सिद्ध हो ही जाती है कि लम्बी कविताओं की ओर युवा कवियों का रुझान इसलिए भी हुआ होगा कि इसके माध्यम से जीवन की बुनियादी और सामयिक सचाइयों को अधिक विस्तार और गहराई से अभिव्यक्त किया जा

---

(१) एक साहित्यिक की डायरी - मुक्तिबोध - पृष्ठ- २७

(२) अभिव्यक्ति सं० बालकृष्ण राव, 'रजनीश' पृष्ठ- ६१-६२

(३) गजानन माधव मुक्तिबोध का रचना संसार - सं० गंगाप्रसाद विमल पृष्ठ- ६२

सकता है। लम्बी कविताओं के 'पीछे आधुनिक युगीन स्थितियों की अनिवार्यता है जिनके तहत लम्बी कविता प्रगीत और प्रबंध से भिन्न और विशिष्ट काव्य रूप है इसमें युगीन यथार्थ को नाटकीय संरचना में उभारा जाता है तथा रचना प्रक्रिया की सतत सर्जनात्मकता तनाव की निरन्तरता को अक्षुण्ण बनाए रखती है जिसमें विचार और अनुभव के नये रिश्ते चरितार्थ होते हैं।'[1] नवलकिशोर का विचार है कि 'अपने माहौल और अपने विरादर से गहरी सम्बद्धता लिये जो युवा कवि आये, उनके लिए लम्बी कविता इसलिए एक उपयुक्त माध्यम रही कि उनका देखा और महसूस किया बहुत कुछ था जिसे वे अपनी - अपनी सत्ताओं के पूरे आक्रोश के साथ प्रकट करना चाहते थे।'[2] डॉ० रामदरश मिश्र के अनुसार लम्बी कविताओं में विचार तत्व[3] की प्रधानता अधिक पाई जाती है। वैसे कविता में विचार की भूमिका नयी कविता के प्रबंध काव्य 'अंधायुग', 'आत्मजयी' आदि से ही प्रारम्भ हो गयी थी। जीवन की जटिलताओं, समस्याओं और विद्रूपताओं को उधेड़ने में तथा परिवेशगत दबाव की अभिव्यक्ति करने में लम्बी कविताएँ अधिक सार्थक सिद्ध हुई हैं। जिनमें विचारतत्व ने अच्छा खासा योगदान दिया है।

१- अंधेरे में

मुक्तिबोध ने अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने की बात 'अंधेरे में' कविता में ही कही है[4] इस कविता को देखकर इस निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन नहीं है कि उन्होंने अभिव्यक्ति का रास्ता ईमानदारी के साथ लम्बी कविताओं के फैंटेसी भरे वातावरण में खोज लिया था।[5] अंधेरे में कविता

---

(१) बलदेव बंशी १२-७-७६ के पत्र के आधार पर

(२) लहर कवितांक १९७२ कविता: कुछ सवाल - पृष्ठ- ४०

(३) चाँद का मुंह टेढ़ा है - पृष्ठ- २८०

(४) मधुमती दिसम्बर १९७६- कविता में अनुभूति और विचार-पृष्ठ- १६

(५) मुक्तिबोध का रचना संसार सं० गंगाप्रसाद विमल- जगदीशगुप्त-पृष्ठ-६६

का मूल तथ्य व्यक्तित्व अथवा अस्मिता की खोज है मुक्तिबोध ने खोई हुई अभिव्यक्ति के खोजने की बात कही है ।[१] यह अभिव्यक्ति शाब्दिक अभिव्यक्ति न होकर व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है । डॉ० नामवरसिंह के शब्दों में 'निस्संदेह इस कविता का मूल कथ्य है अस्मिता की खोज ; किन्तु कुछ आम व्यक्तिवादी कवियों की तरह इस खोज में किसी प्रकार की आध्यात्मिकता या रहस्यवाद नहीं, बल्कि गली - सड़ी सड़क की गतिविधि, राजनीतिक परिस्थिति और अनेक मानव-चरित्रों की आत्मा के इतिहास का वास्तविक परिवेश है।[२] 'अंधेरे में' में फेंटेसी और जासूसी कहानी का मिला जुला शिल्प। जगह-जगह रहस्य और रोमांच के क्षण हैं, भय और आतंक की भी कमी नहीं है । इसमें रात के अंधेरे में चलता हुआ एक विचित्र जुलूस है जिसमें कर्नल, ब्रिगेडियर, विद्वान, कवि, पत्रकार और हत्यारे शामिल हैं । इसमें एक कलाकार की हत्या होती है । काव्य-नायक जो कि आत्मनिर्वासित व्यक्ति है, उसकी अच्छी खासी स्क्रीनिंग होती है । लाठी गोली[३] चलने का उल्लेख भी है और अंधेरे में चुपचाप गुप्त पर्चे बाँटे जाने की सूचना भी 'पूरी कविता में आकस्मिक और अप्रत्याशित को गूँथकर एक विलक्षण तर्क संगति बनाई गई है । मुक्तिबोध के काव्य-संसार के भूगोल को रेखांकित करना बेहद मुश्किल काम है । वह एक अण्डर ग्राउण्ड संसार है - एक अधोलोक जिसमें वे अंधेरी शक्तियाँ उजागर होती हैं जो हमारे समय में मनुष्य को घेरे हैं और जिससे उसे खतरा है ।'[४] गरज यह कि सस्पेंस इस कविता में शुरू से

- -

(१) क- वह रहस्यमय व्यक्ति / अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है
---- चांद का मुंह टेढ़ा है - पृष्ठ- २४७ ।
ख- अन खोजी निज-समृद्धि का वह परम उत्कर्ष,/ परम अभिव्यक्ति
---- चांद का मुंह टेढ़ा है - पृष्ठ- २८६ ।
(२) कविता के नये प्रतिमान - पृष्ठ- २३५ ।
(३) नगर से भयानक धुंआ उठ रहा है/ कहीं आग लग गयी, कहीं गोली चल गयी / सड़कों पर मरा हुआ फैला सुनसान-
--- चांद का मुंह टेढ़ा है - पृष्ठ-
(४) फिलहाल - अशोकवाजपेयी- पृष्ठ- ११८

आखिर तक बना हुआ है और इससे कविता को अद्भुत नाटकीयता मिली है जैसा कि नामवरसिंह ने लिखा है कि यह केवल काव्य-शैली का चमत्कार नहीं बल्कि कथ्य की गहरी अर्थवत्ता का सूचक है।[१]

इस कविता में दो धुनें बार-बार बजती हैं 'अब तक क्या किया / जीवन क्या जिया' ये दो पंक्तियाँ कविता में तीन बार दोहराई जाती हैं। दूसरी ध्वनि है 'कहीं आग लग गयी, कहीं गोली चल गयी, इसे आठ बार दोहराया गया है। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने इस दोहरावट को इस कविता की संरचना का अभिन्न अंग माना है।[२] ये दोनों धुनें अतीत और वर्तमान को रेखांकित करती हैं। अतीत प्रश्नचिन्हांकित है जब कि वर्तमान भय और आतंक से भरपूर। भविष्य की कल्पना मुक्तिबोध की अपनी निजी है। गोली चलना और आग लगना वस्तुत: जनविद्रोह का प्रतीक है और मुक्तिबोध ने इसके द्वारा युग बदलने का संकेत किया है। सभी शोषित और उपेक्षित यहाँ तक कि बच्चे और बूढ़े भी अपनी स्लेट पट्टी लाठी लेकर इस जनसंघर्ष में भाग लेते हैं। मुक्तिबोध पाठक को विश्वास दिलाना चाहते हैं कि यह सब कथा नहीं है बल्कि सच है ---

> यह कथा नहीं है, यह सब सच है, हाँ भई
> कहीं आग लग गयी, कहीं गोली चल गयी।[३]

लेकिन मनचाहे भविष्य का स्वप्न देखने के बाद मुक्तिबोध जीवन की कठोर सचाई पर वापस आ लेते हैं। उनकी यह वापसी यथार्थ की उपेक्षा न करने का प्रमाण है। स्वप्न सचाई बन सकता है, यह

- -

(१) कविता के नये प्रतिमान - पृष्ठ- २३७
(२) आधुनिकता और हिन्दी साहित्य- पृष्ठ- २८
(३) चाँद का मुंह टेढ़ा है - अँधेरे में - पृष्ठ- २८६

बोध कराकर 'अँधेरे में' कविता की तान परम अभिव्यक्ति की खोज पर टूटती है। इन्द्रनाथ मदान इस अन्त को कविता पर आरोपित मानते हैं। उन्हें लगता है कि या तो यह संरचना की विवशता का परिणाम है या कविता का अन्त देने की लाचारी।[१] वास्तव में यह अन्त भी मुक्तिबोध के काव्य-शिल्प का अच्छा उदाहरण है। उन्होंने अपने मूल कथ्य पर जोर देने के लिए जो बार-बार अभिव्यक्ति की खोज की बात दोहराई है वह अनावश्यक या अनायास नहीं है। उनका शिल्प संगीत की तान की तरह अनेक धुनों की अनेक आवृत्तियों से निर्मित हुआ है उसका अपना एक विशिष्ट अंदाज है जो 'अननोटिस्ट' नहीं रह पाता।

(२) <u>मुक्ति प्रसंग</u> ::-

इस कविता के मूल में स्थिति, मन: स्थिति को स्पष्ट करते हुए राजकमल चौधरी ने लिखा है कि जिजीविषा और मुमुर्षा इस कविता के मूलगत कारण है 'सती-वर्तमान के अग्नि जर्जर शव को अपने कंधों पर मैं शिव की तरह धारण करता हूं। मैं इस शव के गर्भ में हूं, और यह शव मेरे कंधों पर है। इसकी विकृति, वीभत्सता और दुर्गन्धियों में मुझे जीवित रहना ही पड़ेगा। जीवित ही नहीं मुक्त और स्वाधीन भी रहना पड़ेगा।' यह कविता आपरेशन टेबिल पर पड़े कवि रोगी के निजी दर्दों से शुरू होती है और आगे चलकर अस्पताल समूचे देश के रूप में फैल जाता है। लेकिन यह कविता केवल देशी परिदृश्य तक सीमित नहीं रहती अपितु अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भों[२]

---

(१) आधुनिकता और हिन्दी साहित्य - पृष्ठ-२६

(२) जिसे बेडौल टुकड़ों में बांटकर अलग - अलग चाहते हैं
भोग करना बनिये - सौदागर
इस दुनियां की सबसे नंगी सबसे मजबूत औरत का नाम है
वियतनाम
--- मुक्ति प्रसंग - --- पृष्ठ-२१

तक फैल जाती है। मृत्यु के साक्षात्कार से शुरू होकर यह कृति शासनतंत्र, देशी-विदेशी राजनीति से गुजरती हुई जिस प्रकार कविता और मृत्यु को मुक्तिमार्ग बताकर खत्म हो लेती है उससे लगता है कि राजकमल के जीवन सम्बन्धी निष्कर्ष अवास्तविक और पलायनवादी हैं। वास्तव में मुक्तिप्रसंग वस्तु की दृष्टि से उतनी सफल नहीं जितनी शिल्प की दृष्टि से जैसा कि डॉ० माहेश्वर तिवारी ने लिखा है - इसका शिल्प नया और ताजा है उसमें प्रचंड गतिमयता, वेगवान जिजीविषा आक्रामक और संश्लिष्ट शब्दावली तथा आधुनिक बिम्ब और प्रतीक की योजना है।[१]

इसका शिल्प कुछ इस तरह गढ़ा गया है कि बहुत से ब्योरे बहुत से पात्र और बहुत सी घटनाएँ जो कि राजकमल चौधरी के वर्तमान से अविच्छिन्न है, बिना किसी क्रम के सजा दिए गए हैं।[२] इस प्रकार की सूचनाओं में राजकमल के निजी प्रसंगों के साथ कुछ सामाजिक संदर्भ भी जुड़ गए हैं। राजकमल की निजता में शायद ही किसी की दिलचस्पी हो लेकिन निजता से जोड़कर प्रस्तुत किए गए देशी - विदेशी राजनीतिक और सामाजिक परिदृश्य निश्चय ही सार्थक है। मुक्तिप्रसंग में तुकों का आग्रह नहीं है। फैंटेसी का उपयोग इसमें है लेकिन सपाटबयानी के साथ। मुक्तिप्रसंग की फैंटेसी ज्यादा लम्बी नहीं खिचती[३] इसमें योग और तंत्र की शब्दावली इड़ा पिंगला सुषुम्ना, उग्रतारा आदि तथा नीलकन्या, नीली नदी पौराणिक

- -

(१) आधुनिक हिन्दी कविता सं० जगदीश चतुर्वेदी - पृष्ठ - १२४

(२) रम डालकर देह की राजनीति करती थीं
मंजू हालदार
नीली नदी थी मेरे गांव की उन्मादिनी
नीली उग्रतारा
--- मुक्ति प्रसंग - --- - पृष्ठ - ६

(३) मैंने उसे देखा उसके कटे हुए दोनों स्तनों को जोड़कर बनाया गया है
पृथ्वी का गोलाम्बर
और वह बुझे हुए लैम्प पोस्टों को जलाने की कोशिश में
लहूलुहान हो गयी है मैंने उसे देखा
--- मुक्ति प्रसंग - - पृष्ठ - २६-२७

सर्प जैसे प्रतीकों तथा बहुत से तल्ख बिम्बों के माध्यम से राजकमल ने इस रचना को असाधारण बना दिया है। मुक्तिप्रसंग के महत्व को स्वीकारते हुए डॉ० नामवरसिंह ने लिखा है कि यदि मृत्यु के प्रत्यक्ष अनुभव से छनकर ऐसी ईमानदार काव्य कृति हिन्दी में न आई होती तो बीटनिक आन्दोलन हिन्दी के लिए एक फैशन बनकर रह जाता।[1] डॉ० नामवरसिंह के अनुसार कविता में प्रलाप सुलभ वाक्यों की आवृत्ति है और है एक प्रभावशाली वक्तव्य गुण। बीच-बीच में 'सेक्स' के खुले शब्दों से भद्र रुचि को धक्का देने की शोखी या शरारत। समग्र प्रभाव एक प्रकार की निर्वैयक्तिकतासी करुणा का पड़ता है।[2]

(३) पटकथा --

पटकथा भारतीय स्वतंत्रता के पिछले बीस बाईस वर्षों का मूल्यांकन करने का महत्वाकांक्षी प्रयास है। इस कविता की प्रेरणा मुक्तिबोध के 'अंधेरे में' से मिली लगती है। मुक्तिबोध की कविता की तरह इसमें भी सब कुछ अंधेरे में ही होता है। कविता के आखिर में जिस प्रकार मुक्तिबोध का स्वप्न भंग होता है उसी प्रकार धूमिल की नींद टूटती है[3] दोनों कविताओं में दृष्टि के अतिरिक्त परिवेश का अन्तर भी है। 'अंधेरे में' में विद्रोह का माहौल है जब कि पटकथा में चुनाव की राजनीति का शोर। यही कारण है कि 'अंधेरे में' में जुलूस है जब कि पटकथा में

---

(१) आलोचना जनवरी, १९७४ --- पृष्ठ-७१

(२) वही । --- पृष्ठ-७१

(३) नींद और नींद के बीच का जंगल काटते हुए
मैंने कई रातें जागकर
गुजार दी हैं।
--- संसद से सड़क तक - पटकथा - 'धूमिल' पृष्ठ-१४१

भीड़। अशोक बाजपेयी, इन्द्रनाथ मदान, विजयमोहनसिंह, रामकृपाल पाण्डेय आदि सभी आलोचक इस बात पर एकमत है कि धूमिल की रचना मुक्तिबोध की कविता से उन्नीस पड़ती है। मुक्तिबोध अपेक्षाकृत अधिक सजग और अधिक प्रतिबद्ध कवि है। उनकी सी गहराई गहनता अर्थगरिमा तनाव और जटिल बुनावट इस कविता में नहीं आ सकी है।[१]

'अंधेरे में' और पटकथा के शिल्प में पर्याप्त अन्तर है। इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में 'अंधेरे में' की संरचना नाट्यात्मक या दृश्यात्मक विधान को लिए हुए है और पटकथा की संरचना कथात्मक विधान को।'[२] 'अंधेरे में' में फैंटेसी है लेकिन पटकथा में फैंटेसी का स्पर्श लिए हुए नाटकीयता। पटकथा का नायक भारतीय जनतंत्र की असमर्थता चुनावों की निरर्थकता और राजनीतिक सामाजिक मूल्यों की उलट फेर को बड़े गौर से देखता है और इस नतीजे पर पहुँचता है कि आज़ादी के बाद उगी हुई तमाम आशाएँ और आकांक्षाएँ आज धूल में मिल गई हैं। जनतंत्र एक तमाशा मात्र है और समाजवाद की हैसियत मालगोदाम में लटकी हुई बाल्टियों से ज्यादा नहीं है ---

मगर मैं जानता हूं कि मेरे देश का समाजवाद
माल गोदाम में लटकती हुई
उन बाल्टियों की तरह है जिस पर 'आग' लिखा है
और उनमें बालू और पानी भरा है[३]

---

(१) आलोचना - अप्रैल जून, १९७५ - सार्थकता वादी कवि धूमिल का काव्यालोक - रामकृपाल पाण्डेय - पृष्ठ - ७५

(२) आधुनिकता और हिन्दी साहित्य- पृष्ठ - १५६

(३) संसद से सड़क तक - पृष्ठ - १३६

पटकथा का शिल्प सपाटबयानी का है और तुकों ने उसमें गति और तेजी पैदा की है विजयमोहन सिंह का यह आरोप कि शब्दों के ऊपरी उपयोग के प्रति धूमिल की मोहग्रस्तता तुकों के आग्रह तक सीमित हो जाती है,[१] पटकथा पर आंशिक रूप में ही लागू होती है। वास्तव में धूमिल 'तुकारामी' साहित्यकार नहीं है उनकी बहुत सी तुकें उनकी भाषा सामर्थ्य और शिल्प चातुर्य की गवाही देती है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पंक्तियाँ तुक पर आधारित होने के बावजूद कहीं से भी कमजोर नहीं है ---

जिसके पास थाली है
हर भूखा आदमी
उसके लिए सबसे भद्दी
गाली है[२]

धूमिल को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उन्होंने युवा कवियों को मुक्तिबोधीय फैंटेसी के आकर्षण से उभार कर सपाटबयानी की ओर प्रेरित किया। युवा कवियों ने मुक्तिबोध की नकल पर फैंटेसी के प्रयोग तो किए थे लेकिन वे अधिकतर अनुकृति बनकर रह गए। इस दृष्टि से धूमिल की पटकथा लम्बी कविताओं के शिल्प की पुरानी जमीन को तोड़कर अभिव्यक्ति का एक नया अंदाज सामने लाती है। पटकथा में युग के यथार्थ को उभारने वाले बिम्बों और प्रतीकों की कमी नहीं है इनमें से कुछ तो बहुत ही ताजे और मौलिक हैं---

एक अजीब - सी प्यार भरी गुर्राहट :

---

(१) आधुनिक हिन्दी - कविता से - जगदीश चतुर्वेदी - पृष्ठ - १३८

(२) संसद से सड़क तक - पटकथा - पृष्ठ - ११६

जैसे कोई मादा भेड़िया
अपने छौने को दूध पिला रही है और
साथ ही किसी मेमने का सिर चबा रही है[1]

पटकथा में स्फीति है। जहां बीस पच्चीस साल की राजनीतिक सामाजिक इतिहास की सचाइयों को बयान करना हो वहाँ यह अस्वाभाविक नहीं है। धूमिल के विचार से प्रत्येक कविता एक सार्थक वक्तव्य होती है लेकिन यह तय है कि वक्तव्य देने की अधीरता या भाषणबाजी ने पटकथा के शिल्प को निश्चय ही कमजोर किया है लेकिन यह कमजोरी इतनी अधिक नहीं है कि पटकथा को धूमिल की शिल्पविधि को अधिक गहरे स्तरों पर ले जाने की अक्षमता का प्रमाण मान लिया।

(४) लुकमान अली::-

सौमित्र मोहन की गणना अकवियों में होती है लेकिन दूसरे अकवियों से सौमित्र मोहन अलग है क्यों कि बावजूद रूमानी स्फीति के उनके यहां बड़बोलापन और सामान्यीकरणों को लेकर बातूनीपन काफी कम है दूसरे उनकी भाषा की जड़ें ज्यादातर गहरे निजी अनुभव और दैनिक गद्यात्मकता में हैं।[2] लुकमान अली में उन्होंने एक आम आदमी के कोण से भारतीय स्वतंत्रता की उपलब्धियों और सीमाओं की पड़ताल की है। लुकमान अली एक आम आदमी का चरित्र है जिसमें कवि ने अपने निजी परिवेश को भेदकर सार्वजनिक मंच पर उतरने की कोशिश की है परन्तु कवि ने यह स्वीकार भी किया है कि 'लुकमान अली मेरे लिए मात्र

---

(१) संसद से सड़क तक - पटकथा - पृष्ठ- १२२-२३
(२) फिलहाल - अशोकवाजपेयी - पृष्ठ- ६८

प्रतीक नहीं हैं - इसकी शारीरिक सत्ता है, फन्तासी की सत्ता है। सौमित्र मोहन अपने बुनियादी रूमानी तथा अकविता वादी स्वभाव को पूरी तौर पर इस कविता में छोड़ नहीं सके हैं इसी लिए कविता जितने अच्छे कथ्य को लेकर आगे बढ़ती है उतनी प्रभावशाली नहीं हो पाती। लम्बी कविताओं में प्राय: जिस तरह के मुहावरे और अनावश्यक संदर्भ आप से आप जुड़ जाते हैं वे इस कविता में भी देखने को मिल जाते हैं। कविता में बहुत सी पंक्तियाँ संगतिहीन तथा अनर्गल प्रलाप जैसी लगती हैं। कहीं-कहीं पर सामान्यीकरणों का सहारा लेकर सही स्थिति का बोध कराने का प्रयास किया गया है।

लुकमान अली के लिए स्वतंत्रता उसके कद से केवल तीन इंच बड़ी है
वह बनियान की जगह तिरंगा पहन कर कलाबाजियाँ खाता है
वह चाहता है कि पांचवें आम चुनाव में दोनों का प्रतिनिधित्व करे
उन्हें टाफियाँ बाँटें
जाति और भाषा की कसमें खिलाए
- - - - - - - - - - - - - - - -
वह जानता है कि चुनाव
लोगों की राय का प्रतीक नहीं, धन और धमकी का अंगारा है[१]

समकालीन कविता के कुछ चालू मुहावरे[२] नाम, चित्र तथा सामान्यीकरण इस कविता में जगह - जगह उभरकर अपना करिश्मा दिखाने

- -

(१) फिलहाल - पृष्ठ- ६७ से उद्धृत

(२) वह सोने और भाषा के बीच के पुल
को अपनी कमर में लपेटकर संसद में कूद जाना चाहता है।
- - - - - - - - - - - -
लुकमान अली प्रजातंत्र की हंडिया में महापुरुषों की डाक टिकटें,
सिक्के और वीरता चक्र
--- इकट्ठे करता हुआ भीख माँग रहा है।
--- फिलहाल - पृष्ठ- ६६ से उद्धृत

के लिए बेताब दीख पड़ते हैं । अशोक वाजपेयी के शब्दों में 'पूरी कविता चित्रों, बिम्बों, नामों, चुस्त फिकरेबाजी, सामान्यीकरणों आदि का एक बेढ़ब सा गोदाम बन कर रह गई है ।'[1] यही कारण है कि लुकमान अली जैसा सार्वजनिक चरित्र नायक होते हुए भी कविता में वह शक्ति नहीं आ पाती जो आनी चाहिए थी । शब्दों की फिजूल खर्ची इस कविता में देखी जा सकती है साथ ही गहरी नाटकीय लय का अभाव भी । डॉ० नामवरसिंह को यह कविता अपने विन्यास में 'सुर्रियलिज्म' की याद दिलाती है ।[2]

(५) खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व :-

खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व मणि मधुकर की एक लम्बी कविता है जो बातचीत की शैली में उभरती हुई समकालीन वास्तविक परिदृश्य को प्रस्तुत करती है । खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व जैसा कि अशोक वाजपेयी ने संकेत दिया है जबर्दस्ती लम्बी बनाई गई कविता है । भाषा की प्रौढ़ता और अभिव्यक्ति के मजाव के बावजूद यदि यह अधिक सफल नहीं हो सकी है तो इसका कारण इसकी शिल्पगत अस्पष्टता और अराजकता ही है । तुकों की खिलवाड़, बिम्ब बहुलता और बयानबाजी के अच्छे उदाहरण इस कविता में मिल जाते हैं ।[3] उसमें इधर उधर बिखरे बिम्ब सूत्रों या

- -

(१) फिलहाल - पृष्ठ- ६६

(२) आलोचना जनवरी-मार्च, १६७४ - पृष्ठ- ७१

(३) हकीकत (यदि तुम्हें यह शब्द पसन्द हो तो) यही है
कि पृथ्वी गोल नहीं है (बजती है पर ढोल नहीं है)
तिकोनी है
इसीलिए ताउम्र मुझे, तुम्हें, सबको
इसकी लाश ढोनी है ।

--- फिलहाल- पृष्ठ-३६ से उद्धृत

विचार सूत्रों को किसी सार्थक या गहरी संगति में जोड़ना मुश्किल होगया है और पूरी कविता इस अर्थ में चित्रहीन हो जाती है।[1]

पूरी कविता में आधुनिक परिवेश के जटिल और यथार्थ परिदृश्य को ईमानदारी से उठाया जाने पर भी वह खण्ड-खण्ड बिखरता हुआ मालूम होता है। कविता में धर्म, सामाजिक व्यवस्था तथा राजनीति पर व्यंग्य भी है किन्तु वह भी सार्थक प्रभाव नहीं छोड़ पाता। कविता गद्यात्मक विवरण, चालू मुहावरों, सरलीकरणों और मैं की पैगम्बराना मुद्रा में जकड़ कर ही ठंडी पड़ गई है। डॉ० हरिचरण शर्मा का यह कथन समर्थन की अपेक्षा रखता है कि कवि के पास शिल्प है परन्तु जब वह शिल्प का तिलिस्म गढने लगते हैं या केवल शिल्प के ही सहारे सारी अनुभूति को सम्प्रेषित करना चाहते हैं तब कविता रचनात्मक स्तर से गिरने लगती है।[2] इस कविता में लगता है मणिमधुकर शब्दों को ढूंढ - ढूढ़कर ठूंस देना चाहते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि बहुत से अर्थहीन शब्दों की भीड़ ने कविता में उबाऊपन ला दिया है। जिससे शब्दों की फिजूल खर्ची ही साबित होती है। इस संदर्भ में बहुत से सार्थक शब्दों की अन्विति भी बार-बार खटकती है तथा कविता की शिल्पगत कमजोरी का स्वत: प्रमाण जुटाती है। कवि ने 'मेरी असलियत में एक छेद है / चुगलखोर है और सचमुच मुझे इसका खेद है / महसूस तो करता हूं मुझमें एक गर्मी है या गर्मी की शैली है / (मौलिकता पर भरोसा नहीं रहा) कहकर मानवीय स्थिति पर चोट करते हुए अपनी असमर्थता का रहस्य भी उजागर किया है।

- -

(१) फिलहाल - पृष्ठ - ३७

(२) पुनश्च - पृष्ठ - ३७३

कवि ने जब भी चमत्कार की प्रवृत्ति छोड़कर भाषा को सहज संवेद्य रूप से ढाला है वहाँ कविता की वस्तु गहरे अन्तर्मन को स्पर्श भी कर जाती है।[1] यदि मणि मधुकर चुस्त बयानी और बयान बाजी तथा शिल्पीय चमत्कार के चक्कर में न पड़ते तो न तो यह कविता अनावश्यक विस्तार ले पाती और न कथ्य के साथ अन्याय ही कर पाती। लंबी कविताओं में पाई जाने वाली रूढ़िया तथा कमियाँ स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आई हैं। कवि के पास अपना शिल्प है, परन्तु मोहवश वह उस पर नियंत्रण करने में सफल नहीं हो सका है।

६- तलघर ::-

तलघर प्रमोद सिन्हा की लम्बी कविता है। इस लम्बी कविता के क्रमश: तीन अंश हैं--- आदमखोर, अनास्था और यंत्रस्थ पीढ़ी। इन तीनों खण्डों में देश, स्वतंत्रता, नैतिकता आदि को अपने तरीके से देखा गया है। इस कविता की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कविता के भीतरी और बाहरी ढाँचे की बुनावट एक सी है इसमें किसी प्रकार का उलझाव या भटकाव नहीं है। कवि ने स्वयं इस ओर संकेत किया है कि 'कविता के भीतरी और बाहरी ढाँचे की बुनावट में दिशाहीनता या भटकाव नहीं है पर जमाव से ऊब और उस ऊब को तोड़ने का प्रयास है, इसीलिए विरोधाभास नहीं है। जीवन के उतार-चढ़ाव की सहजता, मूल्यों की टकराहट, यांत्रिकता और एक स्तर पर स्थिरपन जैसा जो कुछ भी की अभिव्यक्ति केवल त्रास नहीं देती बल्कि एक ओर व्यवस्था में बदलाव लाने का यत्न भी करती है।'[2]

- -

(१) वह जाने लगी / और अचानक मुझे भाने लगी पर / मैंने उसे रोका नहीं / रोकने का अर्थ है उसके नजरिये को ओढ़ना / अपने लिए एक अपरिचित नरक खोजना।

--- पुनश्च - पृष्ठ- ३७३ से उद्धृत

(२) तलघर - प्रमोद सिन्हा - फ्लैप पर का वक्तव्य।

इस कविता का शिल्प अन्य लम्बी कविताओं की अपेक्षा सरल तथा सपाट है जिसमें भाषा के सरलीकरण के साथ-साथ प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग कम ही हुआ है। कवि अपने अनुभवों को सरल तथा सहज रूप से अभिव्यक्त करता गया है। जब कवि स्वतंत्रता की उपलब्धियों पर विचार करता हुआ स्वयं से ही प्रश्न पूछ बैठता है तब वह अपने विचारों को ज्यों का त्यों रख कर भाषा-सम्प्रेषणीयता की वृद्धि करता है ---

आखिर यह स्वतंत्रता हमें क्या देगी
जिसके लिए लगातार अब तक विज्ञापन पढ़ते रहे, और
गढ़ते रहे सब मिलकर निरर्थक मूर्तियां[1]

कविता में सूक्तियों का प्रयोग कवि ने किया है। चाहे वह 'क्या तुम जानते हो कि सच / केवल एक गुनाह हुआ करता है।/की शब्दावली में हो अथवा 'समय निर्णायक होता है' जैसा लघु प्रयास हो। कविता में शब्द तथा बहुत से स्थान पर वाक्यों की पुनरावृत्ति भी देखी जा सकती है। यह प्रयोग शायद कवि ने अपनी बात को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए किया है परन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली है। यह ठीक है कि अन्य लम्बी कविताओं की भाँति तलघर में ब्यौरेबाजी तथा चमत्कार नहीं है, चालू मुहावरों से बचने की कोशिश भी कवि ने की है। परन्तु तब भी स्वयं शिल्प की कमजोरी के कारण कविता विचारों को कुरेदती नहीं है। कवि को व्यवस्था, स्वतंत्रता, तथा नैतिक मान्यताओं के प्रति अविश्वास है। उनको बदलने का वह हामी है इसके बावजूद भी कविता का शिल्प ठंडा है उसमें आक्रोश नहीं है। यह प्रमोद सिन्हा के शिल्प की एक विशेषता ही कही जा सकती है। क्यों कि अन्य कवियों की तुलना में उन्होंने वही बात अपनी सहजता तथा सरल अभिव्यक्ति के माध्यम से प्रस्तुत करदी है।

---

(१) तलघर - प्रमोद सिन्हा पृष्ठ- ९८

अन्य लम्बी कविताएँ ::-

'अँधेरे में', 'मुक्तिप्रसंग', 'पटकथा', 'लुकमानअली', 'खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व', और 'तलघर' के अतिरिक्त जो लम्बी कविताएँ चर्चित रही हैं उनमें सकलदीपसिंह की 'आकस्मिक', दूधनाथसिंह की 'सुरंग से लौटते हुए', श्याम विमल की 'कविता' के हाथ' डॉ० मनोहर अभय की 'एक चेहरा पच्चीस दरारें', बलदेव वंशी की ' उपनगर में वापसी', आदि हैं। 'आकस्मिक मुक्ति प्रसंग से प्रभावित लम्बी कविता है। यह व्यक्ति की निजता के खो जाने और परिवेश के अजनबी हो जाने को अच्छी तरह से पेश करती है। इसमें अनास्था, संत्रास, भुलावा, अरदा आदि अनेक स्वर हैं। लेकिन प्रमुख है व्यक्तित्व का टूटना' इसमें बुद्धिवाद का विरोध है अबौद्धिकता का निरूपण है।१ यही कारण है कि यह कविता समकालीन सामाजिक संदर्भों का प्रामाणिक दस्तावेज न बनकर व्यक्तिगत टूटन का पोस्टर बनकर रह गई है। अन्य लम्बी कविताएँ भी अपने समकालीन कथ्य को लेकर चलती हैं जिसमें युग की समस्याओं का लेखा-जोखा है। ये कवितायें भी अपने सशक्त शिल्प के कारण ही अधिक चर्चित हुई हैं।

निष्कर्ष ::-

साठोत्तरी कविता का शिल्प छोटी कविताओं से लेकर लम्बी कविताओं तक की यात्रा से गुजरा है। जो कवि अपने लघु प्रयास में अपनी अनुभूतियों और विचारों की अभिव्यक्ति नहीं कर सके उन्होंने लम्बी कविताओं का रास्ता अपनाया। युग की समस्याओं, जटिलताओं तथा उसके यथार्थ की अभिव्यक्ति लम्बी कविताओं में सही ढंग से हो सकी है।

---

(१) आधुनिकता और हिन्दी साहित्य- इन्द्रनाथ मदान पृष्ठ-६२

अपनी बात को अधिक सम्प्रेषणीय धारदार तथा प्रभावशाली बनाने के लिये कवियों ने प्रतीकों, बिम्बों तथा उपमानों का प्रयोग लम्बी कविताओं में अधिक सचेष्टता के साथ किया है। फैंटेसी का प्रयोग लम्बी कविताओं के शिल्प की एक विशिष्ट उपलब्धि है जो निश्चय ही अपने पूर्व के शिल्प से भिन्न है। ब्योरेबाजी सामान्यीकरण तथा सपाटबयानी जहाँ पर फैशन बनकर आई है वहीं पर लम्बी कविताओं का शिल्प कमजोर प्रतीत होता है। लम्बी कवितायें निश्चय ही युग की परिस्थिति तथा समकालीन दबाव की अभिव्यक्ति का सही दस्तावेज हैं, जो उसके प्रभावशाली शिल्प द्वारा और अधिक सशक्त बन गया है। अत: लम्बी कविताओं का शिल्प निश्चय ही साठोत्तरी कविता के शिल्प की एक अन्यतम विशिष्ट तथा महान उपलब्धि है।

---
o